श्रीमद् भगवदगीता – प्रथम अध्याय

अनुक्रम

पहले अध्याय का माहात्म्य 1
पहला अध्यायःअर्जुनविषादयोग 4

पहले अध्याय का माहात्म्य

श्री पार्वती जी ने कहाः भगवन् ! आप सब तत्त्वों के ज्ञाता हैं। आपकी कृपा से मुझे श्रीविष्णु-सम्बन्धी नाना प्रकार के धर्म सुनने को मिले, जो समस्त लोक का उद्धार करने वाले हैं। देवेश ! अब मैं गीता का माहात्म्य सुनना चाहती हूँ, जिसका श्रवण करने से श्रीहरि की भक्ति बढ़ती है।

श्री महादेवजी बोलेः जिनका श्रीविग्रह अलसी के फूल की भाँति श्याम वर्ण का है, पक्षिराज गरूड़ ही जिनके वाहन हैं, जो अपनी महिमा से कभी च्युत नहीं होते तथा शेषनाग की शय्या पर शयन करते हैं, उन भगवान महाविष्णु की हम उपासना करते हैं।

एक समय की बात है। मुर दैत्य के नाशक भगवान विष्णु शेषनाग के रमणीय आसन पर सुखपूर्वक विराजमान थे। उस समय समस्त लोकों को आनन्द देने वाली भगवती लक्ष्मी ने आदरपूर्वक प्रश्न किया।

श्रीलक्ष्मीजी ने पूछाः भगवन ! आप सम्पूर्ण जगत का पालन करते हुए भी अपने ऐश्वर्य के प्रति उदासीन से होकर जो इस क्षीरसागर में नींद ले रहे हैं, इसका क्या कारण है?

श्रीभगवान बोलेः सुमुखि ! मैं नींद नहीं लेता हूँ, अपितु तत्त्व का अनुसरण करने वाली अन्तर्दृष्टि के द्वारा अपने ही माहेश्वर तेज का साक्षात्कार कर रहा हूँ। यह वही तेज है, जिसका योगी पुरुष कुशाग्र बुद्धि के द्वारा अपने अन्तःकरण में दर्शन करते हैं तथा जिसे मीमांसक विद्वान वेदों का सार-तत्त्व निश्चित करते हैं। वह माहेश्वर तेज एक, अजर, प्रकाशस्वरूप, आत्मरूप, रोग-शोक से रहित, अखण्ड आनन्द का पुंज, निष्पन्द तथा द्वैतरहित है। इस जगत का जीवन उसी के अधीन है। मैं उसी का अनुभव करता हूँ। देवेश्वरि ! यही कारण है कि मैं तुम्हें नींद लेता सा प्रतीत हो रहा हूँ।

श्रीलक्ष्मीजी ने कहाः हृषिकेश ! आप ही योगी पुरुषों के ध्येय हैं। आपके अतिरिक्त भी कोई ध्यान करने योग्य तत्त्व है, यह जानकर मुझे बड़ा कौतूहल हो रहा है। इस चराचर जगत की सृष्टि और संहार करने वाले स्वयं आप ही हैं। आप सर्वसमर्थ हैं। इस

प्रकार की स्थिति में होकर भी यदि आप उस परम तत्त्व से भिन्न हैं तो मुझे उसका बोध कराइये|

श्री भगवान बोलेः प्रिये ! आत्मा का स्वरूप द्वैत और अद्वैत से पृथक, भाव और अभाव से मुक्त तथा आदि और अन्त से रहित है| शुद्ध ज्ञान के प्रकाश से उपलब्ध होने वाला तथा परमानन्द स्वरूप होने के कारण एकमात्र सुन्दर है| वही मेरा ईश्वरीय रूप है| आत्मा का एकत्व ही सबके द्वारा जानने योग्य है| गीताशास्त्र में इसी का प्रतिपादन हुआ है| अमित तेजस्वी भगवान विष्णु के ये वचन सुनकर लक्ष्मी देवी ने शंका उपस्थित करे हुए कहाः भगवन ! यदि आपका स्वरूप स्वयं परमानंदमय और मन-वाणी की पहुँच के बाहर है तो गीता कैसे उसका बोध कराती है? मेरे इस संदेह का निवारण कीजिए|

श्री भगवान बोलेः सुन्दरी ! सुनो, मैं गीता में अपनी स्थिति का वर्णन करता हूँ| क्रमश पाँच अध्यायों को तुम पाँच मुख जानो, दस अध्यायों को दस भुजाएँ समझो तथा एक अध्याय को उदर और दो अध्यायों को दोनों चरणकमल जानो| इस प्रकार यह अठारह अध्यायों की वाङमयी ईश्वरीय मूर्ति ही समझनी चाहिए| यह ज्ञानमात्र से ही महान पातकों का नाश करने वाली है| जो उत्तम बुद्धिवाला पुरुष गीता के एक या आधे अध्याय का अथवा एक, आधे या चौथाई श्लोक का भी प्रतिदिन अभ्यास करता है, वह सुशर्मा के समान मुक्त हो जाता है|

श्री लक्ष्मीजी ने पूछाः देव ! सुशर्मा कौन था? किस जाति का था और किस कारण से उसकी मुक्ति हुई?

श्रीभगवान बोलेः प्रिय ! सुशर्मा बड़ी खोटी बुद्धि का मनुष्य था| पापियों का तो वह शिरोमणि ही था| उसका जन्म वैदिक ज्ञान से शून्य और क्रूरतापूर्ण कर्म करने वाले ब्राह्मणों के कुल में हुआ था | वह न ध्यान करता था, न जप, न होम करता था न अतिथियों का सत्कार| वह लम्पट होने के कारण सदा विषयों के सेवन में ही लगा रहता था| हल जोतता और पत्ते बेचकर जीविका चलाता था| उसे मदिरा पीने का व्यसन था तथा वह मांस भी खाया करता था| इस प्रकार उसने अपने जीवन का दीर्घकाल व्यतीत कर दिया| एकदिन मूढबुद्धि सुशर्मा पत्ते लाने के लिए किसी ऋषि की वाटिका में घूम रहा था| इसी बीच मे कालरूपधारी काले साँप ने उसे डँस लिया| सुशर्मा की मृत्यु हो गयी| तदनन्तर वह अनेक नरकों में जा वहाँ की यातनाएँ भोगकर मृत्युलोक में लौट आया और वहाँ बोझ ढोने वाला बैल हुआ| उस समय किसी पंगु ने अपने जीवन को आराम से व्यतीत करने के लिए उसे खरीद लिया| बैल ने अपनी पीठ पर पंगु का भार ढोते हुए बड़े कष्ट से सात-आठ वर्ष बिताए| एक दिन पंगु ने किसी ऊँचे स्थान पर बहुत देर तक बड़ी तेजी के साथ उस बैल को घुमाया| इससे वह थककर बड़े वेग से पृथ्वी पर गिरा और मूर्च्छित हो गया| उस समय वहाँ कुतूहलवश आकृष्ट हो बहुत से लोग एकत्रित हो गये|

उस जनसमुदाय में से किसी पुण्यात्मा व्यक्ति ने उस बैल का कल्याण करने के लिए उसे अपना पुण्य दान किया। तत्पश्चात् कुछ दूसरे लोगों ने भी अपने-अपने पुण्यों को याद करके उन्हें उसके लिए दान किया। उस भीड़ में एक वेश्या भी खड़ी थी। उसे अपने पुण्य का पता नहीं था तो भी उसने लोगों की देखा-देखी उस बैल के लिए कुछ त्याग किया।

तदनन्तर यमराज के दूत उस मरे हुए प्राणी को पहले यमपुरी में ले गये। वहाँ यह विचारकर कि यह वेश्या के दिये हुए पुण्य से पुण्यवान हो गया है, उसे छोड़ दिया गया फिर वह भूलोक में आकर उत्तम कुल और शील वाले ब्राह्मणों के घर में उत्पन्न हुआ। उस समय भी उसे अपने पूर्वजन्म की बातों का स्मरण बना रहा। बहुत दिनों के बाद अपने अज्ञान को दूर करने वाले कल्याण-तत्त्व का जिज्ञासु होकर वह उस वेश्या के पास गया और उसके दान की बात बतलाते हुए उसने पूछाः 'तुमने कौन सा पुण्य दान किया था?' वेश्या ने उत्तर दियाः 'वह पिंजरे में बैठा हुआ तोता प्रतिदिन कुछ पढ़ता है। उससे मेरा अन्तःकरण पवित्र हो गया है। उसी का पुण्य मैंने तुम्हारे लिए दान किया था।' इसके बाद उन दोनों ने तोते से पूछा। तब उस तोते ने अपने पूर्वजन्म का स्मरण करके प्राचीन इतिहास कहना आरम्भ किया।

शुक बोलाः पूर्वजन्म में मैं विद्वान होकर भी विद्वता के अभिमान से मोहित रहता था। मेरा राग-द्वेष इतना बढ़ गया था कि मैं गुणवान विद्वानों के प्रति भी ईर्ष्या भाव रखने लगा। फिर समयानुसार मेरी मृत्यु हो गयी और मैं अनेकों घृणित लोकों में भटकता फिरा। उसके बाद इस लोक में आया। सदगुरु की अत्यन्त निन्दा करने के कारण तोते के कुल में मेरा जन्म हुआ। पापी होने के कारण छोटी अवस्था में ही मेरा माता-पिता से वियोग हो गया। एक दिन मैं ग्रीष्म ऋतु में तपे मार्ग पर पड़ा था। वहाँ से कुछ श्रेष्ठ मुनि मुझे उठा लाये और महात्माओं के आश्रय में आश्रम के भीतर एक पिंजरे में उन्होंने मुझे डाल दिया। वहीं मुझे पढ़ाया गया। ऋषियों के बालक बड़े आदर के साथ गीता के प्रथम अध्याय की आवृत्ति करते थे। उन्हीं से सुनकर मैं भी बारंबार पाठ करने लगा। इसी बीच में एक चोरी करने वाले बहेलिये ने मुझे वहाँ से चुरा लिया। तत्पश्चात् इस देवी ने मुझे खरीद लिया। पूर्वकाल में मैंने इस प्रथम अध्याय का अभ्यास किया था, जिससे मैंने अपने पापों को दूर किया है। फिर उसी से इस वेश्या का भी अन्तःकरण शुद्ध हुआ है और उसी के पुण्य से ये द्विजश्रेष्ठ सुशर्मा भी पापमुक्त हुए हैं।

इस प्रकार परस्पर वार्तालाप और गीता के प्रथम अध्याय के माहात्म्य की प्रशंसा करके वे तीनों निरन्तर अपने-अपने घर पर गीता का अभ्यास करने लगे, फिर ज्ञान प्राप्त करके वे मुक्त हो गये। इसलिए जो गीता के प्रथम अध्याय को पढ़ता, सुनता तथा अभ्यास करता है, उसे इस भवसागर को पार करने में कोई कठिनाई नहीं होती।

(अनुक्रम)

पहला अध्यायःअर्जुनविषादयोग

भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को निमित्त बना कर समस्त विश्व को गीता के रूप में जो महान् उपदेश दिया है, यह अध्याय उसकी प्रस्तावना रूप है| उसमें दोनों पक्ष के प्रमुख योद्धाओं के नाम गिनाने के बाद मुख्यरूप से अर्जुन को कुटुंबनाश की आशंका से उत्पन्न हुए मोहजनित विषाद का वर्णन है|

|| अथ प्रथमोऽध्यायः ||

धृतराष्ट्र उवाच

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः|
मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय||1||

धृतराष्ट्र बोलेः हे संजय ! धर्मभूमि कुरुक्षेत्र में एकत्रित, युद्ध की इच्छावाले मेरे पाण्डु के पुत्रों ने क्या किया? (1)

संजय उवाच

दृष्टवा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा|
आचार्यमुपसंङगम्य राजा वचनमब्रवीत्||2||

संजय बोलेः उस समय राजा दुर्योधन ने व्यूहरचनायुक्त पाण्डवों की सेना को देखकर और द्रोणाचार्य के पास जाकर यह वचन कहाः (2)

पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूम्|
व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता||3||

हे आचार्य ! आपके बुद्धिमान शिष्य द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न के द्वारा व्यूहाकार खड़ी की हुई पाण्डुपुत्रों की इस बड़ी भारी सेना को देखिये|(3)

अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि|
युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः||4||
धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान्|
पुरुजित्कुन्तिभोजश्च शैब्यश्च नरपुंङगवः||5||

युधामन्युश्च विक्रान्त उत्तमौजाश्च वीर्यवान्।
सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः।।6।।

इस सेना में बड़े-बड़े धनुषों वाले तथा युद्ध में भीम और अर्जुन के समान शूरवीर सात्यकि और विराट तथा महारथी राजा द्रुपद, धृष्टकेतु और चेकितान तथा बलवान काशीराज, पुरुजित, कुन्तिभोज और मनुष्यों में श्रेष्ठ शैब्य, पराक्रमी, युधामन्यु तथा बलवान उत्तमौजा, सुभद्रापुत्र अभिमन्यु और द्रौपदी के पाँचों पुत्र ये सभी महारथी हैं। (4,5,6)

अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम।
नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान्ब्रवीमि ते।।7।।

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! अपने पक्ष में भी जो प्रधान हैं, उनको आप समझ लीजिए। आपकी जानकारी के लिए मेरी सेना के जो-जो सेनापति हैं, उनको बतलाता हूँ।

भवान्भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिंजयः।
अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च।।8।।

आप, द्रोणाचार्य और पितामह भीष्म तथा कर्ण और संग्रामविजयी कृपाचार्य तथा वैसे ही अश्वत्थामा, विकर्ण और सोमदत्त का पुत्र भूरिश्रवा। (8)

अन्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्तजीविताः।
नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः।।9।।

और भी मेरे लिए जीवन की आशा त्याग देने वाले बहुत से शूरवीर अनेक प्रकार के अस्त्रों-शस्त्रों से सुसज्जित और सब के सब युद्ध में चतुर हैं। (9)

अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम्।
पर्याप्तं त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम्।।10।।

भीष्म पितामह द्वारा रक्षित हमारी वह सेना सब प्रकार से अजेय है और भीम द्वारा रक्षित इन लोगों की यह सेना जीतने में सुगम है। (10)

अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः।
भीष्ममेवाभिरक्षन्तु भवन्तः सर्व एव हि।।11।।

इसलिए सब मोर्चों पर अपनी-अपनी जगह स्थित रहते हुए आप लोग सभी निःसंदेह भीष्म पितामह की ही सब ओर से रक्षा करें| (11)

संजय उवाच

तस्य संञ्जनयन्हर्षं कुरुवृद्धः पितामहः।
सिंहनादं विनद्योच्चैः शंख्ङं दध्मौ प्रतापवान्||12||

कौरवों में वृद्ध बड़े प्रतापी पितामह भीष्म ने उस दुर्योधन के हृदय में हर्ष उत्पन्न करते हुए उच्च स्वर से सिंह की दहाड़ के समान गरजकर शंख बजाया| (12)

ततः शंख्ङाश्च भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः।
सहसैवाभ्यहन्यन्त स शब्दस्तुमुलोऽभवत्||13||

इसके पश्चात शंख और नगारे तथा ढोल, मृदंग और नरसिंघे आदि बाजे एक साथ ही बज उठे| उनका वह शब्द बड़ा भयंकर हुआ| (13)

ततः श्वेतैर्हयैर्युक्ते महति स्यन्दने स्थितौ।
माधवः पाण्डवश्चैव दिव्यौ शंख्ङौ प्रदध्मतुः||14||

इसके अनन्तर सफेद घोड़ों से युक्त उत्तम रथ में बैठे हुए श्रीकृष्ण महाराज और अर्जुन ने भी अलौकिक शंख बजाये|(14)

पाञ्चजन्यं हृषिकेशो देवदत्तं धनञ्जयः।
पौण्ड्रं दध्मौ महाशंख्ङं भीमकर्मा वृकोदरः||15||

श्रीकृष्ण महाराज ने पाञ्चजन्य नामक, अर्जुन ने देवदत्त नामक और भयानक कर्मवाले भीमसेन ने पौण्ड्र नामक महाशंख बजाया| (15)

अनन्तविजयं राजा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः।
नकुलः सहदेवश्च सुघोषमणिपुष्पकौ||16||

कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिर ने अनन्तविजय नामक और नकुल तथा सहदेव ने सुघोष और मणिपुष्पकनामक शंख बजाये| (16)

काश्यश्च परमेष्वासः शिखण्डी च महारथः।
धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यिकश्चापराजितः।।17।।
द्रुपदो द्रौपदेयाश्च सर्वशः पृथिवीपते।
सौभद्रश्च महाबाहुः शंख्डान्दध्मुः पृथक् पृथक्।।18।।

श्रेष्ठ धनुष वाले काशिराज और महारथी शिखण्डी और धृष्टद्युम्न तथा राजा विराट और अजेय सात्यकि, राजा द्रुपद और द्रौपदी के पाँचों पुत्र और बड़ी भुजावाले सुभद्रापुत्र अभिमन्यु-इन सभी ने, हे राजन ! सब ओर से अलग-अलग शंख बजाये|

स घोषो धार्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत्।
नभश्च पृथिवीं चैव तुमुलो व्यनुनादयन्।।19।।

और उस भयानक शब्द ने आकाश और पृथ्वी को भी गुंजाते हुए धार्तराष्ट्रों के अर्थात् आपके पक्ष वालों के हृदय विदीर्ण कर दिये| (19)

अथ व्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान् कपिध्वजः।
प्रवृत्ते शस्त्रसम्पाते धनुरुद्यम्य पाण्डवः।।20।।
हृषिकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते।
अर्जुन उवाच
सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत।।21।।

हे राजन ! इसके बाद कपिध्वज अर्जुन ने मोर्चा बाँधकर डटे हुए धृतराष्ट्र सम्बन्धियों को देखकर, उस शस्त्र चलाने की तैयारी के समय धनुष उठाकर हृषिकेश श्रीकृष्ण महाराज से यह वचन कहाः हे अच्युत ! मेरे रथ को दोनों सेनाओं के बीच में खड़ा कीजिए|

यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धुकामानवस्थितान्।
कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन् रणसमुद्यमे।।22।।

और जब तक कि मैं युद्धक्षेत्र में डटे हुए युद्ध के अभिलाषी इन विपक्षी योद्धाओं को भली प्रकार देख न लूँ कि इस युद्धरुप व्यापार में मुझे किन-किन के साथ युद्ध करना योग्य है, तब तक उसे खड़ा रखिये| (22)

योत्स्यमानानवेक्षेऽहं य एतेऽत्र समागताः।

धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः।।23।।

दुर्बुद्धि दुर्योधन का युद्ध में हित चाहने वाले जो-जो ये राजा लोग इस सेना में आये हैं, इन युद्ध करने वालों को मैं देखूँगा| (23)

संजयउवाच
एवमुक्तो हृषिकेशो गुडाकेशेन भारत।
सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम्।।24।।
भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षिताम्।
उवाच पार्थ पश्यैतान् समवेतान् कुरुनिति।।25।।

संजय बोलेः हे धृतराष्ट्र ! अर्जुन द्वारा इस प्रकार कहे हुए महाराज श्रीकृष्णचन्द्र ने दोनों सेनाओं के बीच में भीष्म और द्रोणाचार्य के सामने तथा सम्पूर्ण राजाओं के सामने उत्तम रथ को खड़ा करके इस प्रकार कहा कि हे पार्थ ! युद्ध के लिए जुटे हुए इन कौरवों को देख| (24,25)

तत्रापश्यत्स्थितान् पार्थः पितृनथ पितामहान्।
आचार्यान्मातुलान्भ्रातृन्पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा।।26।।
श्वशुरान् सुहृदश्चैव सेनयोरूभयोरपि।
तान्समीक्ष्य स कौन्तेयः सर्वान्बन्धूनवस्थितान्।।27।।
कृपया परयाविष्टो विषीदन्निमब्रवीत्।

इसके बाद पृथापुत्र अर्जुन ने उन दोनों सेनाओं में स्थित ताऊ-चाचों को, दादों-परदादों को, गुरुओं को, मामाओं को, भाइयों को, पुत्रों को, पौत्रों को तथा मित्रों को, ससुरों को और सुहृदों को भी देखा| उन उपस्थित सम्पूर्ण बन्धुओं को देखकर वे कुन्तीपुत्र अर्जुन अत्यन्त करूणा से युक्त होकर शोक करते हुए यह वचन बोले|(26,27)

अर्जुन उवाच
दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम्।।28।
सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति।
वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते।।29।।

अर्जुन बोलेः हे कृष्ण ! युद्धक्षेत्र में डटे हुए युद्ध के अभिलाषी इस स्वजन-समुदाय को देखकर मेरे अंग शिथिल हुए जा रहे हैं और मुख सूखा जा रहा है तथा मेरे शरीर में कम्प और रोमांच हो रहा है|

गाण्डीवं स्त्रंसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते।
न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः।।30।।

हाथ से गाण्डीव धनुष गिर रहा है और त्वचा भी बहुत जल रही है तथा मेरा मन भ्रमित हो रहा है, इसलिए मैं खड़ा रहने को भी समर्थ नहीं हूँ|(30)

निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव।
न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे।।31।।

हे केशव ! मैं लक्ष्णों को भी विपरीत देख रहा हूँ तथा युद्ध में स्वजन-समुदाय को मारकर कल्याण भी नहीं देखता| (31)

न कांक्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च।
किं नो राज्येन गोविन्द किं भोगैर्जीवितेन वा।।32।।

हे कृष्ण ! मैं न तो विजय चाहता हूँ और न राज्य तथा सुखों को ही| हे गोविन्द ! हमें ऐसे राज्य से क्या प्रयोजन है अथवा ऐसे भोगों से और जीवन से भी क्या लाभ है? (32)

येषामर्थे कांक्षितं नो राज्यं भोगाः सुखानि च।
त इमेऽवस्थिता युद्धे प्राणांस्त्यक्तवा धनानि च।।33।।

हमें जिनके लिए राज्य, भोग और सुखादि अभीष्ट हैं, वे ही ये सब धन और जीवन की आशा को त्यागकर युद्ध में खड़े हैं| (33)

आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहाः।
मातुलाः श्वशुराः पौत्राः श्यालाः सम्बन्धिनस्तथा।।34।।

गुरुजन, ताऊ-चाचे, लड़के और उसी प्रकार दादे, मामे, ससुर, पौत्र, साले तथा और भी सम्बन्धी लोग हैं| (34)

एतान्न हन्तुमिच्छामि घ्नतोऽपि मधुसूदन।

अपि त्रैलोक्यराज्यस्य हेतोः किं नु महीकृते।।35।।

हे मधुसूदन ! मुझे मारने पर भी अथवा तीनों लोकों के राज्य के लिए भी मैं इन सबको मारना नहीं चाहता, फिर पृथ्वी के लिए तो कहना ही क्या? (35)

निहत्य धार्तराष्ट्रान्नः का प्रीतिः स्याज्जनार्दन।
पापमेवाश्रयेदस्मान् हत्वैतानाततायिनः।।36।।

हे जनार्दन ! धृतराष्ट्र के पुत्रों को मारकर हमें क्या प्रसन्नता होगी? इन आततायियों को मारकर तो हमें पाप ही लगेगा| (36)

तस्मान्नार्हा वयं हन्तुं धार्तराष्ट्रान् स्वबान्धवान्।
स्वजनं हि कथं हत्वा सुखिनः स्याम माधव।।37।।

अतएव हे माधव ! अपने ही बान्धव धृतराष्ट्र के पुत्रों को मारने के लिए हम योग्य नहीं हैं, क्योंकि अपने ही कुटुम्ब को मारकर हम कैसे सुखी होंगे? (37)

यद्यप्येते न पश्यन्ति लोभोपहतचेतसः।
कुलक्षयकृतं दोषं मित्रद्रोहे च पातकम्।।38।।
कथं न ज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्निवर्तितुम्।
कुलक्षयकृतं दोषं प्रपश्यद्भिर्जनार्दन।।39।।

यद्यपि लोभ से भ्रष्टचित्त हुए ये लोग कुल के नाश से उत्पन्न दोष को और मित्रों से विरोध करने में पाप को नहीं देखते, तो भी हे जनार्दन ! कुल के नाश से उत्पन्न दोष को जाननेवाले हम लोगों को इस पाप से हटने के लिए क्यों नहीं विचार करना चाहिए?

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्माः सनातनाः।
धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत।।40।।

कुल के नाश से सनातन कुलधर्म नष्ट हो जाते हैं, धर्म के नाश हो जाने पर सम्पूर्ण कुल में पाप भी बहुत फैल जाता है|(40)

अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः।
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसंकरः।।41।।

हे कृष्ण ! पाप के अधिक बढ़ जाने से कुल की स्त्रियाँ अत्यन्त दूषित हो जाती हैं और हे वार्ष्णेय ! स्त्रियों के दूषित हो जाने पर वर्णसंकर उत्पन्न होता है|(41)

संकरो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च।
पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रियाः।।42।।

वर्णसंकर कुलघातियों को और कुल को नरक में ले जाने के लिए ही होता है| लुप्त हुई पिण्ड और जल की क्रियावाले अर्थात् श्राद्ध और तर्पण से वंचित इनके पितर लोग भी अधोगति को प्राप्त होते हैं|(42)

दोषैरेतैः कुलघ्नानां वर्णसंकरकारकैः।
उत्साद्यन्ते जातिधर्माः कुलधर्माश्च शाश्वताः।।43।।

इन वर्णसंकरकारक दोषों से कुलघातियों के सनातन कुल धर्म और जाति धर्म नष्ट हो जाते हैं| (43)

उत्सन्कुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन।
नरकेऽनियतं वासो भवतीत्यनुशुश्रुम।।44।।

हे जनार्दन ! जिनका कुलधर्म नष्ट हो गया है, ऐसे मनुष्यों का अनिश्चित काल तक नरक में वास होता है, ऐसा हम सुनते आये हैं|

अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयम्।
यद्राज्यसुखलोभेन हन्तुं स्वजनमुद्यताः।।45।।

हा ! शोक ! हम लोग बुद्धिमान होकर भी महान पाप करने को तैयार हो गये हैं, जो राज्य और सुख के लोभ से स्वजनों को मारने के लिए उद्यत हो गये हैं| (45)

यदि मामप्रतीकारमशस्त्रं शस्त्रपाणयः।
धार्तराष्ट्रा रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत्।।46।।

यदि मुझ शस्त्ररहित और सामना न करने वाले को शस्त्र हाथ में लिए हुए धृतराष्ट्र के पुत्र रण में मार डालें तो वह मारना भी मेरे लिए अधिक कल्याणकारक होगा| (46)

संजय उवाच

एवमुक्त्वार्जुनः संख्ये रथोपस्थ उपाविशत्।
विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्नमानसः।।47।।

संजय बोलेः रणभूमि में शोक से उद्विग्न मन वाले अर्जुन इस प्रकार कहकर, बाणसहित धनुष को त्यागकर रथ के पिछले भाग में बैठ गये।(47।

ॐ तत्सदिति श्रीमदभगवदगीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अर्जुनविषादयोगो नाम प्रथमोऽध्यायः।।1।।

इस प्रकार उपनिषद, ब्रह्मविद्या तथा योगशास्त्ररूप श्रीमदभगवदगीता के
श्रीकृष्ण-अर्जुन संवाद में 'अर्जुनविषादयोग' नामक प्रथम अध्याय संपूर्ण हुआ।